International Journal of Multidisciplinary Research and Development 2015; 2(2): 135-137

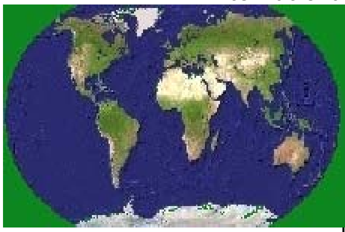

International Journal of Multidisciplinary Research and Development

IJMRD 2015; 2(2): 135-137
www.allsubjectjournal.com
Received: 05-01-2015
Accepted: 03-02-2015
E-ISSN: 2349-4182
P-ISSN: 2349-5979
Impact factor: 3.762

डॉ0 नन्दिनी समाधिया
पी0एच0डी0 (संस्कृत)
1054 खजूर बाग नई बस्ती झाँसी

मनुस्मृति के अनुसार जीवन में सनातन धर्म का महत्व

डॉ0 नन्दिनी समाधिया

जीवन में सनातन धर्म का महत्व :

धर्म हमारे नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का आकार होता है। धर्म उनका संरक्षक भी है और प्रेरक भी। व्यावहारिकता की दृष्टि से धर्म दो प्रकार का होता है–सनातन धर्म और युग धर्म। सनातन धर्म सभी काल एवं स्थानों में एक जैसा होता है एवं तदनुसार सनातन जीवन–मूल्य भी स्थायी होते हैं; जबकि युगधर्म देष–काल के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। इन्हें परिवर्तनीय मूल्य कहते हैं।

मानव का निर्माण मात्र जीववैज्ञानिक प्रक्रिया का परिणाम नहीं है। वह केवल शरीर नहीं है, अपितु उसमें मन और आत्मा का भी समावेष है। अतः मनुष्य की प्रवृत्तियों को भी तीन स्तरों पर समझा जा सकता है–आत्मिक वृत्तियाँ, मानसिक वृत्तियाँ एवं भौतिक वृत्तियाँ। इन स्तरों पर जीवन मूल्यों की प्रकृति एवं विकृति को यहाँ स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। प्रत्येक स्तर के कुछ साकारात्मक अथवा रचनात्मक मूल्य होते हैं और कुछ निषेधात्मक मूल्य। रचनात्मक जीवन–मूल्य हर देष–काल में ग्राह्य रहे हैं, जबकि निषेधात्मक मूल्य अग्राह्य समझे जाते हैं। इन्हें निम्नलिखित वर्गीकरण द्वारा समझा जा सकता है।

आत्मिक स्तर :–

सकारात्मक (ग्राह्य) मूल्य	निषेधात्मक (मूल्य (अग्राह्य) मूल्य
विष्वास	सन्देह
आषा	भय
स्नेह	ईर्ष्या
सत्य	असत्य
संयम	असंयम
सहनषीलता	क्रोध
सहयोग	असहयोग
देष भक्ति	देषद्रोह
परमार्थ	स्वार्थ
आस्था	अनास्था
आस्तिकता	नास्तिकताए

मानिसिक स्तर

महत्त्वाकांक्षा	लक्ष्यहीनता
संकल्प	विकल्प
सरलता	कुटिलता
मित्रता	शत्रुता
विवेक	अविवेक
आषावादिता	निराषा
आत्म–विष्वास	आत्महीनता

भौतिक स्तर

हिंसा	अहिंसा
दक्षता	मूर्खता
सावधानी	असावधानी
स्पष्टता	भ्रांति
आह्लाद	मलीनता
उत्साह	शैथिल्य
शक्ति	आलस्य

सहज मानव प्रकृति में विकार आने से अनेक विषमताएँ एवं विसंगतियाँ उत्पन्न होती हैं और निषेधात्मक मूल्यों का प्रादुर्भाव होता है। ये त्यागने के लिए होते हैं और रचनात्मक जीवन–मूल्य जीवन में अपनाने के लिए। बिना एक के त्याग के दूसरे का अपनाना सम्भव नहीं। रचनात्मक मूल्यों को अपनाने में ही धर्म का रक्षण अनुरक्षण सम्भव होता है, क्योंकि ये ही धर्म के प्रधान घटक होते हैं। जब मनुष्य रचनात्मक अथवा विधायी जीवन–मूल्यों को त्यागकर निषेधात्मक जीवन–मूल्य अपनाता है तो वह धर्म से दूर चला जाता है। इसीलिए सब काल में और सब जगह धर्मोपदेषक यह उपदेष देते आये हैं कि चोरी, व्यभिचार, झूठ, लड़ाई–झगड़ा, छल–कपट, हिंसा आदि निषेधात्मक मूल्यों का त्याग करना चाहिए।

विविध नैतिक मूल्यों के पुंज का नाम ही 'षील' है, जो व्यक्तित्व का उन्नायक एवं आत्मा का उद्धारक है। इसीलिए कहा गया है–''षीलं सर्वत्र वैधनम्'' डॉ. विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में–''षील आत्मा–धर्म का साधक है।.....

Correspondence:
डॉ0 नन्दिनी समाधिया
पी0एच0डी0 (संस्कृत)
1054 खजूर बाग नई बस्ती झाँसी

जीवन का मुख्य उद्देष्य आत्मा का उद्धार है, अवसाद, लोभ, भय, झूठ, द्वेष, मद, मोह में फँसी हुई आत्मा का उद्धार है, व्यष्टि के अभिमान से आत्मा में सन्निहित समष्टि का, सम्भावना का उद्धार है। इसलिए जब इस उद्धार की बात सोचे, तो आदमी को निर्मम को जाना चाहिए, तब उसके लिए कोई स्वजन–विषेष नहीं रह जाता। पर एक बात यहीं कहना चाहूँगा, निर्ममता भी अन्त नहीं है, साध्य नहीं है, वह भी साधना है एक महत्तर उद्देष्य का, वह उद्देष्य है, परमात्मा भाव, समस्त भूतों में एक अव्यय भाव, समस्त सृष्टि की ओर सिर झुकाये उर्ध्वमूल अष्वत्थ का भाव, अन्नपूर्णा के आगे खप्पर लिए दिगम्बर षिव का भाव, बरसने के लिए आये हुए घनष्याम का भाव, केवट की चिरौरी करने–वाले राम का भाव, राधा के चरणों में बिछे हुए श्रीकृष्ण का भाव, सुजाता की खीर के लिए हाथ पसारे हुए बुद्ध का भाव। इसे भक्ति कहं, परकीय होना कहें, मरजीवा हो जाना कहं, अग–अंग काट कर खेत हो जाना कहें, ''मनेर–मानुस'' के लिए बाउल हो जाना कहें, यही धर्म का धर्म है। इस भाव का होना ही असल में होना है, और होना तो बस होने की छटपटाहट है।

भारत की एकता :

हम देखते हैं कि धर्म के नाम और रूप अनेक हैं और इनमें से एक–एक पूरे–पूरे सांस्कृतिक जीवन को निर्धारित करता है। ये अनेक धर्म अपनी–अपनी पूर्जार्चना पद्धति तथा वैयक्तिक और सामाजिक जीवन अनेक कर्त्तव्य निर्धारित करते हैं, उनकी मर्यादा निष्चित करते हैं। धर्मों में पारस्परिक भिन्नताएकृ बाहरी होती हैं, जिनका कारण उनके उद्‌भव–स्थान की भौगोलिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ होती हैं। यदि हम धर्मों के केन्द्रीय मूल्यों पर विचार करें, जो धर्म के प्राणतत्त्व होते हैं, तो हम उनमें अद्‌भुत साम्य पाते हैं। ये धर्मों के आध्यातिम्क अंष होते हैं एवं मानव को सत्कार्यों में प्रेरित करने में सहायक होते हैं। इन केन्द्रीय मूल्यों एवं उनमें पारस्परिक साम्य पर विचार करने से मनुष्य की भेद–दृष्टि सहज रूप में कम हो जायेगी। योगी अरविन्द के अनुसार ''अनेकता तथा विषमता के पीछे एकता प्रायः सभी मानव धर्मों तथा दर्षनों का रहस्य है; क्योंकि वे सभी सत्य का कोई प्रतिबिम्ब अथवा आंषिक संकेत ग्रहण करते हैं तथा एक ही सत्य के किसी अंष को स्पर्ष करते या इसके अनन्त रूपों में से किसी एक को व्यक्त करते हैं।''

धर्म और ईष्वर–ये भारतीय संस्कृति के प्रमुख अंग रहे हैं। साथ ही सर्वजनहित हमारा लक्ष्य रहा है। अतः भारतीय विचार–दृष्टि अन्य राष्ट्रों के हित को अपने हित से अलग नहीं अपितु समान ही मानती आई है। अनेकत्व में एकत्व का दर्षन हमारे आचार्यों ने किया था और पृथ्वी पर सभी को उनके विषेष–विषेष गुणों के उत्कर्ष– साधन की षिक्षा दी थी, जैसा कि मनु ने कहा है–

एतद्देषप्रसूतस्य सकाषादग्रजन्मनः।
स्वयं स्वयं चरित्रं षिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

अपने इन्हीं गुणों के कारण भारत कभी 'जगद्‌गुरू' के पद से सुषोभित रहा है और आज भी विष्व का सत्त्वगुणी समुदाय आध्यात्मिक मार्गदर्षक के लिए भारत की ओर ताक रहा है। गान्धीजी विष्व धर्म का स्वप्न देखा करते थे; क्योंकि उनका यह दृढ़ विष्वास था कि एक ईष्वर की कल्पना प्राय विष्व के सभी धर्मों में पाई जाती है। किंतु विष्व–धर्म व्यावहारिक रूप से विष्व में कब प्रतिष्ठित होगा–यह कहना कठिन है। वैयक्तिक भेद से ईष्वर के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की आस्था और धारणा भी भिन्न होती है किंतु वह दिन दूर नहीं जब कि मनुष्य अपने सम्प्रदायों का आदर करने लगेगा। हम सब उसी एक परमेष्वर की सन्तानें हैं। अतः हम सब समान हैं। भारतीय संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष–ये चार पुरुषार्थ प्रतिष्ठित हैं। ये व्यक्ति के भी है और अखिल मानवजाति के भी। अतः वैयक्तिक जीवन की चरितार्थता का विष्व के समष्टि जीवन की चरितार्थता के साथ कोई विरोध नहीं है। धर्म की विषेषताएँ बताते हुए किसी कवि ने ठीक ही कहा है–

जिये–जिलाये बढ़े–बढ़ाये आत्मीय देवत्व जहाँ।
विष्व–परिधि का केन्द्र प्रभू हो, भोग–तनाव समाप्त जहाँ।।

भारत की सांस्कृतिक एकता में धर्मों के समान तत्त्वों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों का बाह्य कलेवर भिन्न होते हुए भी उनमें एकता विद्यमान है, जो सदियों से देष को एकता–सूत्र में बाँधे हुए हैं।

धर्मों में समानताएँ :

फारतसी धर्म में कहा गया हे कि ''सदाचार, दानषीलता, दया, नम्रता, मधुर भाषण, परहितेच्छा, हृदय की स्वच्छता, ज्ञानार्जन, सत्यभाषण, क्रोधषमन धैर्य, सन्तोष, मित्रता, लज्जा, छोटे–बड़ों का मान, पवित्रता, माता–पिता तथा गुरुजनों का सम्मान–ये सब अच्छे मानव के मित्र हैं और बुरे के शत्रु कनफ्यूषियस धम्र की अपनी मूल्य– पद्धति है। इसमें एक स्वच्छ एवं अच्छे समाज के निर्माण के लिए पाँ संबंधों पर विषेष जोर दिया गया है; जैसे–पिता और पुत्र के बीच, छोटे और बड़े भाई के बीच, पति–पत्नि के बीच वरिष्ठ एवं कनिष्ठ मित्र के बीच, शासक एवं प्रजा के बीच। इनमें तीन का संबंध परिवार से हैं कनफ्यूषियस के अनुसार परिवार समाज की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। उसके अनुसार ''बच्चों का माता–पिता के प्रति कर्त्तव्य सभी सदाचारों का उद्‌गम स्रोत है। कनफ्यूषियस ने अच्छे आदमी की पहचान के रूप में जिन पारम्परिक जीवन–मूल्यों को परिगणित किया है, वे विष्व के प्रायः सभी धर्मों में पाये जाते हैं। फिर भी प्रत्येक धर्म का अपना केन्द्रीय मूल्य होता है, जैसे ईसाई धर्म का सेवा–भाव, जैन धर्म का अहिंसा, इस्लाम का भाईचारा, बौद्ध–धर्म का करुणा, हिन्दू– धर्म में श्रद्धा या विष्वास आदि।

संसार के धर्मों में कौन सी बातें समान हैं ? यह सुनिष्चित करने के लिए एक महान इतिहासकार ने अपने जीवन के चालीस वर्ष लगा दिये और निष्कर्ष के रूप में उनके सामने दो बातें आईं–

1. ईष्वर में विष्वास, यदि उसकी सत्ता है तो।
2. यह जीवन जीने योग्य हैं, कभी–कभी।

धर्मनिरपेक्षता की पाष्चात्य अवधारणा के अनुसार ईष्वर की सत्ता में अविष्वास एक अनिवार्य शर्त है। इसके विपरीत ईष्वर की सत्ता (चाहे हम उस महाषक्ति या परम सत्ता) में विष्वास यह आस्किता–धार्मिकता की पहली शर्त है। तुलनात्मक धर्म में डॉ. राधाकृणान ने ठीक ही लिखा है–''धर्म का निवास मनुष्य के मन में है, यह स्वयं मनुष्य के स्वभाव का एक अंग है। बाकी प्रत्येक वस्तु विलीन हो सकती है, परन्तु ईष्वर में विष्वास, जो संसार के सब धर्मों की चरम स्वीकृति है, शेष रह जाता है। धर्म चाहे कितने ही रूप क्यों न बदल ले, परन्तु वह तब तक बना रहेगा, जब तक कि मनुष्य, जो कुछ वह है– अर्थात् शक्ति और दुर्बलता का सम्मिश्रिण बना रहेगा। मनोविज्ञान के अध्ययन में प्रकट हुए धर्म की प्रारम्भिक अभिव्यक्तियों की इस बात से पुष्टि होती है।''

हस्टन स्थिम ने हिन्दू–इस्लाम, जैन, बौद्ध सिक्ख, ईसाई, ताओ, षिन्तों, कनफ्यूषियस आदि संसार के सभी धर्मों का अध्ययन (द रिलीजन्स ऑफ मॅन) करके एक निष्कर्ष यह निकाला कि ''संसार के सभी धर्मों में महत्त्वपूर्ण बातें प्रायः एक जैसी हैं। जैसे –

1. प्रत्येक धर्म में स्वर्णिम नियम (गोल्डेन रूल) की बातें समाविष्ट हैं।
2. प्रत्येक धर्म मानता है कि अपनी तकलीफों का कारण स्वयं मनुष्य होता
3. है, उसकी तकलीफें दूर करने में धर्म सहायक होता है।
4. एक दैवी परम सत्ता को सभी धर्मों ने माना है, जिससे मनुष्य का
5. अविर्भाव हुआ और जिस दैवी संबंध से मनुष्य को अपनी अच्छाइयाँ प्रकट करना है।
6. मोक्ष या मुक्ति के लिए आवष्यक परमसत्य एवं धर्म में वर्णित है तो अन्य धर्मों में भी।

धर्मों में पाई जाने वाली समानताओं को हम उनमें निहित एवं सम्पृक्त विविध जीवन–मूल्यों की समानताओं का विष्लेषण, करके भलीभॉति ऑक सकते हैं। इसलिए यहाँ हम आस्था, भाईचारा, साहस, कर्त्तव्य, भक्ति, निष्ठा, शान्ति आज्ञाकारिता, प्रेम, न्याय और क्षमा–इन दस जीवन–मूल्यों का विवेचन विविध धर्मों के परिप्रेक्ष्य में करेंगे।

8. References

1. भारतीय संस्कृति (भाग–1) भारतीय संस्कृति संसद द्वारा प्रकाषित ''धर्मः मानवीय मूल्य'' शीर्षक लेख, पृ. 368
2. We my call call ourselves Christian, Hindus or Mohammedans, Whatever, we may be, beneath that diversity there is oneness which is unmistakable and underneath many religions there is also one religion. As for as my experience goes, at one time or another, we, the Mohammedans, Christians or Hindus, discover that there are many points of contact and very few points of difference.
   -Mahatma Gandhi, CWMG, Vol. 26, p. 396
3. To do virtuous deeds, to give in charity, to be kind, to be humble, to speak sweet, to acquire learning to speack the truth, to suppress anger, to be patient and contented, to be friendly, to feel shame. to pay due

respect to the old and young, to be pious to respect our parents and teachers; all these are the friends of the good man and enemies of bad men.

4. "The duty of children to their parents is the fountain from where all virtues spring."
   -Huston Smith, Quoted in the Religions of Man, Page No 171
5. A great historian of religion devoted forty years of his life to determining what the world's religions have in common and came up with two things: "Belief in God- if there be a God," and "Life is worth living – sometimes." - Huston Smith, the Religions of Man, Page No 319
6. तुलनात्मक धर्म, पृ. 14
7. A second possible answer to the question of the relation between religions is that in all important respects they are the same. Does not each contain some version of the Golden Rule? Do they not all regard man's self-centeredness to be the source of his troubles and seek to help him in its conquest? Does not each acknowledge a universal Divine Ground from which man has sprung and in relation to which his true good is to be sought? If all truth essential to salvation can be found in one religion, it can also be found in each of the other great ones.
   – Huston Smith, The Religions of Man, p.no. 318